अन्तरा-शब्दशक्ति

काव्य संग्रह

धनक

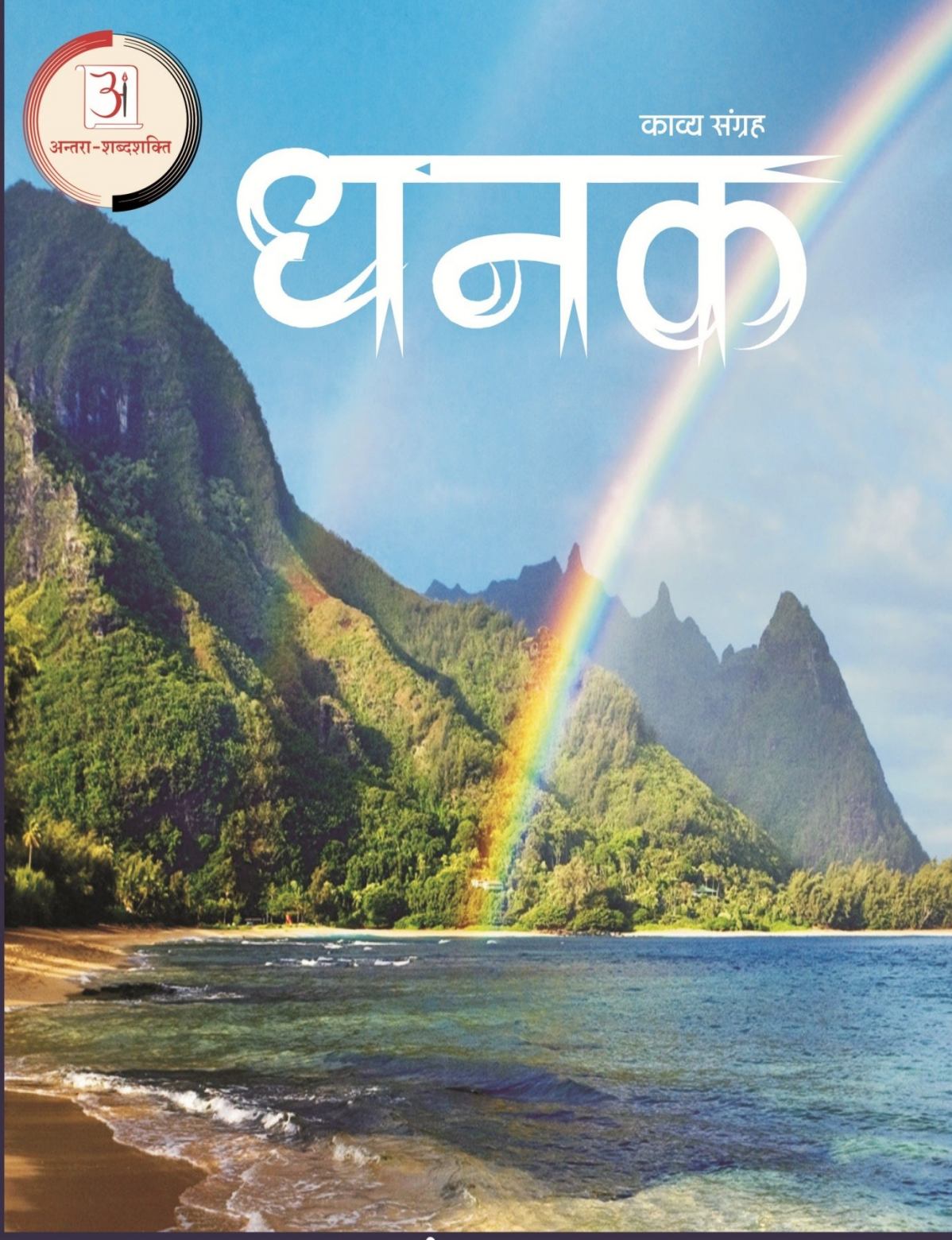

वर्षा अग्रवाल

धनक

(काव्य संग्रह)

वर्षा अग्रवाल

अन्तरा- शब्दशक्ति प्रकाशन

वारासिवनी, मध्यप्रदेश

ISBN- "978-93-5372-017-9"

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन
मुख्य कार्यालय-१५ नेहरु चौक वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र) ४८१३३१
दूरभाष- (कार्या.) ०७६३३-२५३१५९ (मो) ९४२४७६५२५९
अणुडाक- antrashabdshakti@gmail.com
अंतरताना- www.antrashabdshakti.com
प्रथम संस्करण २०१९- वर्षा अग्रवाल
मूल्य-६०.०० रुपये
आवरण चित्र- संदीप सोनी, वारासिवनी
मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी
DHANAK BY VARSHA AGRAWAL
वैधानिक चेतावनी-इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकापी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम से अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरुत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

अनुक्रमणिका

	अपनी बात	5
1.	अतीत	7
2.	पुष्प की पीड़ा	8
3.	अभिव्यक्ति	9
4.	अबूझे प्रश्न	10
5.	गुहार	11
6.	अब कौन	12
7.	बेबस	13
8.	सड़क मेरे घर की	14
9.	मैं	15
10.	वेदना	16
11.	आख़िर क्यूँ	17
12.	प्रेम	18
13.	योगमाया	19
14.	धरा की आस	20
15.	वेलेंटाइन डे	21
16.	नदी की पीर	22
17.	अपकर्ष	23
18.	रिश्ता	24
19.	मैं कुम्हारन	25
20.	दीवानी	26

21. यादों की ज़िद 27
22. बेटियाँ 28
23. मधुमास 29
24. आया फागुन 30
25. मैं हूँ बिटिया 32

अपनी बात

सर्वप्रथम माँ वाणी को नमन करते हुए अपनी भावाभिव्यक्ति "धनक" के रूप में आप सुधि पाठकों तक पहुँचा रही हूँ।

ऐसे कितने ही अवसर,घटनाएँ या अनुभूतियाँ जीवन में आती हैं, जो सहज-स्वभाविक रूप से कभी होठों पर, कभी चेहरे पर तो कभी हमारे व्यवहार से अभिव्यक्त होती हैं।

हाँ! ये अभिव्यक्ति ही तो है, जिसके द्वारा हम अपनी बात दूसरों तक पहुँचा पाते हैं। विचारों को मूर्त रूप शब्दाभिव्यक्ति के माध्यम से ही दिया जा सकता है। जब शब्द लय से तारतम्य बना लेते हैं, तब कदाचित काव्य अस्तित्व पा जाता है और कविता का जन्म हो जाता है।

साहित्य के अनुसार सभी रसयुक्त मनोभावों को कलात्मक रूप से अभिव्यक्त करना काव्य कहलाता है। जैसे भारतीय साहित्य नौ रसों पर आधारित है, वैसे ही मेरी कविताएँ जीवन के विविध रंगों को अपने दृष्टिकोण से परिभाषित करने का प्रयास भर हैं। रंग जीवन का आधार हैं, तो विविधता जीवन जीने का।

मेरी कविताओं के कुछ रंग पनीले हैं,कुछ दर्द की चाशनी में लिपटे हुए। कुछ रंग प्रश्न वाचक हैं, तो कोई अनुत्तरित छोड़ जाते हैं।आस है, अपेक्षाएँ हैं, जीवन के प्रति ललक है, तो समाधान भी है। अतीत की स्मृतियाँ भविष्य की आकांक्षाओं का हाथ पकड़ चलती हैं, तो वर्तमान की सहज क्रियाएँ भी आकर्षित करती हैं।

वर्षा के इस “धनक” का यदि एक भी रंग आपके मन को छू ले तो मुझे भी अपनी रंगीन भावनाओं से अवश्य अवगत कराइयेगा।ताकि मेरी लेखनी भी आपके विचारों की वर्षा में भीग कर “धनक” की भाँति खिल सके।

प्रतीक्षारत.....!

वर्षा अग्रवाल

अतीत

चली जाती हूँ,
अतीत में बारम्बारअहसासने।

दुलार माँ के हाथों कामहसूसने,
आँखों का पहरा पापा कादोहराने।

सहोदरों के साथ शैतानियाँजीने पुनश्च,
हर वो शै जो आई थी, उम्र के उस खास पड़ाव पर।

वर्तमान के यथार्थ से मृदु,
भविष्य की नियति से मधुर।

इमली सी स्मृतियों को जीने
चली जाती हूँ, अतीत में अपने बारम्बार।।

पुष्प की पीड़ा

जीवन की जिस डाली में थे,
कुछ प्यारे से फूल खिले,
देखा तो उस डाली में थे,
कांटे भी कुछ बिंधे हुए।

पूछा...फूलों से जब मैंने !
क्यों तुम ही मुस्काते हो?
क्यों कांटे चुप - चुप रहते हैं,
चुभकर क्यों पीड़ा देते हैं?

कुछ उदास होकर बोला वो ...
नहीं जानती इतना भी तुम !
है अफ़सोस यही हमको,
हमें देती हो, स्नेह भरा स्पर्श
मधुरतम कोमल दृष्टि।

लेकिन क्यों तुम सदा तिरस्कृत
कर देती हो सुहृद को ?
याद रखो तुम ये मत भूलो,
पोषित हैं हम भी तो उनसे, नवजीवन उनसे पाते हैं !
उनकी मुस्कानों को लेकर ही तो हम मुस्काते हैं ।।

अभिव्यक्ति

मौन पीड़ा मुखर हुई जब,शब्द बनकर।
तोड़ डाले बन्ध सब,ये रूप धरकर।

चित्त व्याकुल,खिन्न अन्तस्,वाणी रखे है मौन व्रत।
छा रही है साथ करुणा,प्रिय सलोने वदन पर।

आँख भी कुछ भीगती सी,पलक स्थिर हो रहे।
खेलती हैं किन्तु अलकें,बल पड़े इस भाल पर।

थरथराते ओष्ठ की,भाषा न जो समझोगे तुम।
क्या बचेगा पास उसके,कुछ तो पहले ही न था।

शब्द डूबेंगे,सजल आँखों में फिर से।
सिमट जायेंगे ये बन्धन,आज फिर से ।।

अबूझे प्रश्न

मन में उठते रहे प्रश्न अनबूझे अनेक
निरन्तर...
सुबह -शाम और रात्रि मेंउद्विग्न
करते रहे मुझे समाधान के लिये।

मथते रहे मस्तिष्क को मनन के लिये,
एक सोच उभरती है, किहर प्रश्न का उत्तर होता है।
अवश्य होगा कहीं उत्तर मेरे भी प्रश्नों का,
किन्तु कहाँ?अतीत की स्मृतियों में?

वर्तमान की क्रियाओं मेंया फिर,
भविष्य की आकांक्षाओं में?
पुनः एक प्रश्न चिन्ह?किंतु सोचती हूँ,
किप्रश्नों का ये अंतहीन सिलसिला ही।

कदाचित्परिष्कृत करता है बुद्धि को,
जन्म देता है नयी सोच कोऔर ....
एक नये चिन्तन को।
अबूझे प्रश्नों का ये अंतहीन सिलसिला ।।

गुहार

मैया मुझको अंग लगा ले,
मेरा जीवन संग लगा ले।
मत आरी चलवा तू मुझपे,
मेरी नैया पार लगा ले।।

किलकारी से भर दूँ आँगन,
गलबहियों का हार बना ले।
ठुमक-ठुमक बन जाऊँ रौनक,
आँचल में संसार बसा ले।।

पी-पी पानी जी जाऊँगी,
मुझको खरपतवार बना ले।
बनूँ सहेली जग में तेरी,
कह मुझसे सब राज छिपा ले।।

पीर में तुझको धीर धराऊँ,
खुशियों का अंबार बना ले।
सी दूँ जख्म मैं सारे तेरे,
मुझको जीवन का तार बना ले।।

अब कौन

दीप से दीप जलाये सबने,दिया अकूत मान -सम्मान।
बीत गई अब तो दीवाली,देहरी दीप जलाये कौन?
हाथ चिबुक रख लाडो पूछे,मेरी उंगली पकड़े कौन?
बिठा-बिठा कन्धे पे अपने,मेला मुझे दिखाए कौन?
बहिना प्यारी पथराई सी,राखी अब बन्धवाये कौन?
संजो रखे सपने पलकों में,डोली मुझे बिठाये कौन?

भर-भर आईं पल-पल अखियाँ, देह से निकल गए ज्यूँ प्राण।
लुट गईं छोटी-छोटी खुशियाँ,इंतजार करवाये कौन?
द्वार देहरी आँगन लिपाऊँपग-पग चिन्ह बनाये कौन?
चुपके से पीछे से आकर,धप्पा -धौल जमाये कौन?

बना रसोई किसे परोसूं, ले चटखारे खाये कौन?
हाथ चूम लूँ आज तुम्हारा,ऐसे शब्द सुनाये कौन?
शब्दों में नहीं रहा स्पंदन,अर्थों ने खोई पहचान।
होकर दूर पास थे कितनेलिख-लिख पाती भेजे कौन ?

रक्त लालिमा ज्यूँ सिंदूर की,चौथ को माँग भराए कौन?
मेरी तो हर रात अमावसमेरा चन्दा लाये कौन ??
जनश्रुति में भी बुझ गया दीपक,अन्तस् में उजियारे कौन?
चाहे जितने सूर्य उगा लो, मेरा सूर्य उगाये कौन???

बेबस

उम्र के तीसरे पड़ाव पर,
मुँह ताकती जिंदगी।

अपनों के प्यार को,
पल-पल तरसती जिंदगी।

भर आई अँखियों को,
छलकने से रोकती जिंदगी।

बहुत कुछ सुनकर भी
कुछ न कह पाती जिंदगी।

सम हाल दोस्तों के लगाव की
सान्त्वना से चलती जिंदगी ।

बीते वर्षों का क्षण-क्षण
हिसाब देती जिंदगी ।

कल-कुछ बदलेगा की,
आस में प्रतीक्षारत जिंदगी,
फिर भी निराशा को धकेलती
जीवन से भरी आशारत ज़िंदगी।।

सड़क मेरे घर की

कभी सुना है, सड़क को, नहीं न !
तो,सुनना कभी,महसूसना भी।
कितना कुछ छिपा रखा है, इसने अपने गर्भ में।
सड़क मेरे घर की, जिसनेदेखा है मुझे बढ़ते हुए।

जब "मैं"लाँघ देहरी,चल घुटुअन,
पहुँच जाती थी उसके आँचल में।
चुटकीभर चाटकर रज उसकी,
पाती थी तुष्टि ।

माँ के स्तनपान सी,
जबसीखा मैंने पाँवों पर चलना,
ताकती थी वो निर्मिशेषचौखट की ओर।
कि "मैं" कबसबकी नजरें बचा
आऊँगी और खेलूँगी उसकी गोद में।

चूमती कभी नन्हें पग मेरे,
कभी माटी बन लिपट जाती।
अंगों से मेरेकरती स्नेह प्रदर्शन
और जो सुनती कभी रुदन मेरा,
हो जाती व्याकुल-बेचैन सी।
बहलाती माँ जब लाती बाहर मुझे,
देख सड़क को मुस्काते।

मैं

हो जाती हैरान सी
गई स्कूल जब पहली बार!
नन्हा बस्ता टाँग पीठपर,
नन्हें जूतों की चाप सुनाई थी।
भावातिरेक में सड़क मानो,
नयन-नेह-नीर भर लाई थी।
उसके इसी भाव को पूरने,
कदाचित ईश ने वर्षा कराई थी।
खूब रिक्शा-साइकिल भी,
उसी की छाती पर दौड़ाई थी।
किन्तु, नहीं वो कभी उकताई थी।
कभी खेल पचगुटटी, गेंदताड़ी, तो कभी क्रिकेट भी।
गेंद से उसने हमारी, खूब चोट खाई थी।
फिर भी मुस्काई थी, ब्याह हुआ जिस दिन मेरा,
जोर-जोर वो रोई थी, गम था उसे बिछोह का मेरे,
जाने कितनी रातें न सोई थी।
जाऊँ जब भी "मैं" स्व पीहर,
मिलती है आज भी बाहें फैलाये।
बिछाये पलक पाँवड़े राहों में मेरी,
भूल सबकुछ दुनियादारी,
"मैं" भी चहक उठती हूँ,
दूर से ही देखकर सड़क अपने घर की ।।

वेदना

मन की मनका बिखर गई,
कि चाहूँ न मुस्का पाऊँ!

गूँथ सकूँ खुशियों को जिसमें,
ऐसा तन्तु ढूंढ़ न पाऊँ !
कोर सदा गीली ही रहती,
अंतर को कैसे समझाऊँ?

चिथड़ा-चिथड़ा हुआ भरोसा,
कैसे नेह के दीप जलाऊँ ?
आशाओं ने किया किनारा,
नउम्मीदी कहाँ भगाऊँ?

चूर-चूर हो गया हौसला,
हिम्मत को अब कहाँ जिलाऊँ?
छूट गया रंगों का सम्बल,
इंद्रधनुष कैसे उपजाऊँ ?

स्याह रात में भरे चाँदनी,
ऐसा चाँद कहाँ से लाऊँ???

आख़िर क्यूँ

क्यूँ भर आई अँखियों का पानी,
हर बार पीना पड़ता है?
क्यूँ बात कहते अपनी,
हर बार रुकना पड़ता है?

क्यूँ चुप रहो का कथ्य
सुनकरमुस्कराना पड़ता है?
क्यूँ तुम नहीं जानती से
स्वयं को जोड़ना पड़ता है ?

क्यूँ समक्ष बच्चों के अपने
अपमानित होना पड़ता है ?
क्यूँ कर्त्तव्य राह पर चलकर
भी स्वाभिमान त्यागना पड़ता है ?

अस्तित्व मिटाकर भी अपना
क्यूँ रोकर जीना पड़ता है ?
क्यूँ पीकर घूँट ख़ून के जग में
नारी को जीना पड़ता है ??

प्रेम

सृष्टि का आधारप्रेम, पगा व्यवहार।
हृदय की अभिव्यक्ति, प्रेमजीवन की तृप्ति।

सरल, स्वाभाविक, सहज, प्रेमउत्कंठित भावों की लरज।
प्रथम प्रणय श्रद्धा मनु, प्रेम बिन व्यर्थ तनु।

कुंडल की है कस्तूरी, प्रेम स्निग्ध पारदर्शी पोरी।
निष्ठा, विश्वास, आस, अर्पण, प्रेम प्रथम दृष्टया समर्पण।

अनन्त, अतुलित, कर्त्तव्यपरायण प्रेम की रचना रामायण।
ऋचा, श्लोक, छंद, रुबाई, प्रेम गीति-रीति की गहराई।

आखर,शब्द,वाक्य,बोल,प्रेम की भाषा अनमोल।
भृकुटि, नयन,अधर भाषा,प्रेम की अपरिमित परिभाषा।

देश,समाज,घर,परिवार,प्रेमरचा बसा संस्कार।
रूप, रस,गन्ध,लावण्य,प्रेम उपजाता कारुण्य।

नदी, निर्झर, कुण्ड, सागर, प्रेमपूर्ण शीतल नीर गागर।
मृदुल, सौम्य अनादि ग्रन्थ, प्रेम का बस एक पंथ।।

योगमाया

बेटी .....
वो जिसे कोख तो मिली,
अंकुरित भी हुई।

किंतु ...
कली न बन सकी,

ख़ुशबू से अपनी
जग न महका सकी।

अपनों के ही
क्रूर मंसूबों का शिकार होकर,
चीत्कार करती।

समेट अस्तित्व को अपने,
समा गई क्षिति की गोद में।

पूछती हुई .....
क़ुसूर क्या था मेरा?

धरा की आस

कल, कुछ कर्त्तव्य बोये थे, संग आस के।
कि कल,फूटेंगे अंकुरनेह के,अपनत्व के,विश्वास के।

अपनी उम्र को जीते बिरवे पर।
सहते हुए दुश्वारियाँखाते हुए थपेड़े।

हाँ, शनैः-शनैः खिले फूलबिखेरते सुवास,रचे-बसे,तन-मन में।
फिर,
पलक झपकतेमधुर सुगन्ध, परिवर्तित हो गईमृदुल संस्कारों में।
पैठ गई कुछ इस तरहअब न डर था।

कुंठित नैराश्यपूर्ण तम का,
न दामिनी की अनपेक्षित तड़क का,
प्रकृति अब पा गई थी जिजीविषा।

धरा आश्वस्त थी पूर्णतः कि हरियायेगी कोख उसकी,
इठलायेंगी बदलियाँ, ओढ़ चुनर लाल-पीली।

चढ़ काँधे आसमान के, खिलखिलायेगी स्निग्धा भोर नर्म सी।
क्योंकि, देख लिया था उसने नभ का वह कलुषित कोना।
जो था, मेरी मुट्ठी में भिंचा हुआ ।।

वेलेंटाइन डे

दे-दे गुलाब निर्मोही,
मुझको मोहपाश में बाँध गया।

जतला-जतला के प्यार निरा,
मुझे प्रीत की रीत सिखाय गया।

अधरों से करके कत्ल मुझे,
मन मादकता भरमाय गया ।

सप्तपदी के दिवा स्वप्न में,
विचरण मुझको करवाय गया।

अनछुई देह कोमल छूकर,
मेरी पावनता मलिनाय गया ।

अब पल छिन बाट जोहती हूँ,
मुझे जीवन से बिसराय गया।।

नदी की पीर

नदी ...मेरे गाँव की,
नाम था सिरसा।
विशाल इतनी किकभी
उसमें भी बाढ़ आई थी।

घबराया था छोटा शहर समूचा,
रातोंरात तटबन्धों को किया ऊँचा।
पानी शहर में घुस आया था,
बाढ़ देखने सारा शहर धाया था।

दृश्य वो प्रलय से कम न था,
अपनी आँखों से बाढ़ देखना।
हम बच्चों के लिए अजूबा था,
सारे परवी स्नानों का पुण्य,
सिरसा से ही तो कमाया था।

पर अब पहचान थी, जो मेरे गाँव की,
अब कहीं झाँकने से भी डरती है।
सिरसा अब गले नहीं मिलती
न ही चमकीली आँखों से मेरा सत्कार करती है।

क्यूँ कि अब मीलों तक पट गई है,
लालची ख़्वाहिशों से दफन हो गई है,
धरती की गोद मेंअतृप्त माटी के बोझ तले ।।

अपकर्ष

देवालय गलियों के,
बन गए हैं आश्रय स्थल।

श्वानों के धिक ! हे मानव,
तेरी नवोन्मेषशालिनीप्रखर मेधा को।

निरर्थक है नव निर्मित गगनचुम्बित देवस्थान,
चाहते हो धर्मपथ पर चलनातोसहेजो,
पुरातात्विक भग्नावशेषो को।

अग्रसर हो पुनर्निर्माण की ओर,
पथवारी पूजन वाले देश में।

देवस्थान की इतनी दुर्दशा?
कुछ तो कहना चाहती है हमसे,
समझना हमें है,
कि हम कहाँ जा रहे हैं ?

रिश्ता

अहसास मात्र से
जुड़ गया था रिश्ता।
तुमसे मेरा,
जब तय हुआ।

बनोगे सहचरतुम,
मेरे जीवन पथ के ।

सप्तपदी पर बाँधकर गाँठ,
पावन प्रणय की ।

तुमने संबल दिया था,
मन ही मनअंतर्मन को मेरे।

और हम,
पूरक बन एक दूजे के,
निकल पड़े थे।
नव विहान में,
नया रिश्ता रचने।।

मैं कुम्हारन

घट सृजनकर्म है मेरा,
हों आभासी रज के।

या ईश्वरीय माटी के साधती हूँ समान,
भीतर-बाहर पकाती भी हूँ।

आँवे में ही, आँच चाहे चाम जलाती हो,
या हो परिस्थितियों की करती हूँ, अलंकरण भी।

सज्जित करती एक को नोंक से सरकंडे की,
एक को इच्छा शक्ति से एक को पचरंगा कर।

रूप देती मनमोहक रंगती एक को,
पचरंग संस्कारों से और छोड़ देती हूँ।

जग व्यवहार में तय करने अपने मानक,
उत्सुक रहती हूँ, जानने को मोलस्व कृत्य का।

किन्तु मुस्कुराने का कारण न आज पास,
इसलिए हूँ उदास आभासी घट तृप्त कर गया।

प्यासा तनमेरा घटतोड़ सारे दायरे,
दग्ध कर गयाहर्षित मन ।।

दीवानी

मस्त मगन मैं लगन अगन में,
विरहा सही न जाई।
तेरे कारन कान्हा मैंने,
लोक -लाज बिसराई।।

हिय में बसे-बसे नयनों में,
मुँदी पलक न खोलूँ।
प्रतिपल करती यही विचार,
कि कहीं तुम्हें न खो दूँ।।

एक इकतारा है संगी मेरा
और न कोई दूजा।
संगत देता सुर को मेरे
जब करती तेरी पूजा।।

ले -ले प्रियतम श्याम नाम रे,
तुझे कहाँ मैं पाऊँ।
गा -गाकर पद भाव भरे,
मैं कान्हा तुझे रिझाऊँ ।।

यादों की ज़िद

यादें आज ज़िद्दी हो,
मनमानी पर उतरी हैं, मानती ही नहीं।

कभी इमली से पलों के,
नम घटाकार गवाक्ष में,
कोमल नन्हें क़दमों से,
छुपकर अठखेलियाँ करती है।
नन्हीं गुड़िया सी मानती ही नहीं ।।

कभी नयनार्णव में उतर भावोद्वेलित आवेग संग,
कोर के किनारों पर ठहर जाती है,
रूप लिये मुक्ता का, मानती ही नहीं ।।

कभी जीवन के आसमान पर ख़्वाबों की तुक्कल को,
हौसलों की उड़ान से मनचाही ऊँचाई देती है।

मजबूर करती है, अपनी उम्र का निनाद सुनने को,
मधुर गीति सी मानती ही नहीं, बड़ी ज़िद्दी हैं ये यादें।।

बेटियाँ

आस खोती ज़िंदगी को,
उजास देती बेटियाँ।
पास न हो कुछ भी,
फिर भी पास होती बेटियाँ।

रौनक़ें बढ़ जाती घर की,
हँसती -खिलखिलाती बेटियाँ।
कली बगिया की हमारी,
मधुमास होती बेटियाँ।

पापा की बन माँ सरीखी,
जीना सिखाती बेटियाँ।
धान सा अस्तित्व पाकर,
नयी सृष्टि रचती बेटियाँ।

बाबुल का आँगन महकाती,
सासरे का मान रखती बेटियाँ।
घड़ी कैसी भी हो मुश्किल,
सदा धैर्य धरती बेटियाँ।

भले आँसू हों आँख में,
होठों से मुस्कुराती बेटियाँ।
आध्यात्म आद्या शक्ति हैं,
संजीवनी हैं बेटियाँ।।

मधुमास

लो आ गया ऋतुराज,
पहनकर बासंती परिधान।

तितलियाँ करतीं मधुरसपान,
मधुप सब करते गुंजन गान।
रति ने किया काम से मान,
चले नयनों से प्रीत के बाण।

समाये पाषाणों में प्राण,
क्षिति पा गई शीत से त्राण।
विहगकुल उड़ते ले आलाप,
जपे निर्झर आल्हाद का जाप।

फ़िज़ा महक़ाये सरसों साग,
दृष्टिगोचर अनहद अनुराग।
सृष्टि का कण कण करता रास,
प्रकृति अब मना रही मधुमास।।

आया फागुन

मन्मथ का ये प्रिय सखा,
फागुन गाये फाग।
पंचम सुर रसिया बसे,
अधर सजाते राग ।।

रोम -रोम केसर घुली,
महके चंदन अंग ।
पहनी हवा ने शोख़ियाँ,
बस गई रंग उमंग।।

मदिर महोत्सव प्रीत का ,
धरती खेले फाग।
उच्छवास कस्तूरियाँ ,
बोतीं मधुरिम आग।।

मन टेसू-टेसू हुआ ,
तन हो गया गुलाल ।
अँखियों-अँखियों बो गया,
एक दूजे का हाल।।

अधरों ने चुप्पी धरी,
नयना करते बात ।
गुपचुप आलिंगन हुआ
कंगन खनके कल रात ।।

अवनि गगन रुत बासंती
झूमे सरसों फूल ।
मदिर गंध लिपटा गई ,
ये फागुन की धूल।।

सराबोर हैं प्रीत में,
नहीं भान कोई ठौर ।
फागुन बरजोरी करे,
कस गई अंगिया कुछ और।।

चटख रंग दहके पलाश,
प्रकृति बिंधी अनँगी शर ।
पान करे मधुरस भ्रमर,
नव कलिका चूम अधर ।।

मैं हूँ बिटिया

समंदर भावनाओं का जो फिर से आज लहराया
हुआ इक झोल झोले में मैंने अस्तित्व है पाया।

रोके न बन्ध अब कोई खुला आकाश है धाया
पुचकी है मिली मुझको तो मैंने माँ को हुलसाया।

पिता को देखती हूँ मैं तो थोड़ा कुम्हला जाती हूँ
वचन भरवालो बापू जी मैं तारे तोड़ लाती हूँ ।

करूँगी सेवा तन-मन से नज़र भर देख लो मुझको
करोगे गर्व उस दिन आप भी जो अपना लोगे इस सच को।

लाठी बनूँ या कन्धा या बनूँ आपकी आँख
तारा तो बनाओगे नहीं मुझको उम्मीद से रही हूँ फिर भी ताक।

जो कहोगे बन जाऊँगी झोल का मोल भी चुकाऊँगी
बस.. एक बार गोद में उठा लो चुमकार लो पुचकार लो
बाहों में झुला लो मैं तो इतने में ही तीनों लोक पा जाऊँगी ।।

व्यक्तित्व दर्पण

नाम - वर्षा अग्रवाल

जन्म - 21 नवम्बर 1969, शिकोहाबाद (फ़िरोजाबाद) उत्तरप्रदेश।

शिक्षा - एम.ए., एम. फिल. संस्कृत

पता - 3/377 हरीओम् नगर, मैरिस रोड़, अलीगढ़ (उ.प्र.) 202001

मो. - 9258016490

ई मेल - kcvarshaagrawal@gmail.com

प्रकाशन - साझा काव्य संग्रह- अभिव्यक्ति, साहित्य उदय, साहित्य करुणा, वूमेन आवाज़ भाग-2, नीलाम्बरा (प्रकाशनाधीन)

- साझा लघुकथा संग्रह - दीप देहरी पर, लघुत्तम महत्तम, साहित्य कलश, लघुकथा रजत श्रृंखला, सामयिक लघुकथाएँ, प्रेम विषयक लघुकथाएँ, लघुकथा कलश (लघुकथा का महाविशेषांक), आँठवा फेरा (व्यक्तिगत), पल्लव लेख संकलन

- आखर मुक्ता, नव पल्लव, शब्द गंगा, अग्रज्योति, युवा प्रवर्तक, वर्तमान अंकुर, सरस्वती सुमन, अकोदिया सम्राट, किस्सा, कोताह आदि विभिन्न साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ नियमित प्रकाशित।

सम्मान - साहित्य शिखर, काव्य साधक, लघुकथा श्री, काव्य करुण सम्मान- उद्दीपन प्रकाशन द्वारा। हाईकु सम्राट सम्मान, शब्द कुंज सम्मान, मातृभाषा उन्नयन सम्मान 2019, विश्व मैत्री मंच भारत द्वारा सास्वत सम्मान एवं विभिन्न सामाजिक संस्थाओं द्वारा सम्मानित।
विभिन्न फेसबुक साहित्यिक समूहों द्वारा अनेकों बार सर्वश्रेष्ठ रचनाकार सम्मान से सम्मानित एवं प्रथम स्थान प्राप्त।

यदि आप अंग्रेजी में हस्ताक्षर करते हैं तो निवेदन है कि 'हिन्दी में हस्ताक्षर करें', आपकी यह छोटी-सी कोशिश हिन्दी को राजभाषा से राष्ट्रभाषा बनाने में अमूल्य योगदान देगी।

अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com
१५, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी,
जि. बालाघाट (म.प्र.) पिन ४८१३३१,
संपर्क- ९४२४७६५२५९,
अणुडाक: antrashabdshakti@gmail.com
978-93-5372-017-9
मूल्य- 60/-